ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-8* November-2020
Anthology : The Research

महाकवि भारवि की काव्यशास्त्रीय विशेषता

Poetic Feature of The Great Poet

Paper Submission: 15/11/2020, Date of Acceptance: 25/11/2020, Date of Publication: 26/11/2020

विद्या विन्द
शोध छात्रा,
संस्कृत विभाग,
राम अवध यादव, गन्ना कृषक महाविद्यालय, शाहगंज,
जौनपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

महाकवि भारवि की एकमात्र रचना किरातार्जुनीयम् है। महाकवि भारवि की गणना संस्कृत के श्रेष्ठ महाकाव्यों में की जाती है। किरातार्जुनीयम् 18 सर्गों में निबद्ध महाकवि भारवि का एकमात्र महाकाव्य है। जिसमें कौरवों पर विजय प्राप्ति के लिए अर्जुन का हिमालय पवर्त पर जाकर तपस्या करने, किरात वेशधारी शिव से युद्ध और प्रसन्न शिव से पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति का वर्णन है। सर्ग के आरम्भ में वनेचर द्वैतवन में निवास कर रहे युधिष्ठिर के समक्ष आता है। और दुर्योधन की राज्यस्थिति तथा उनके मनोभावों को जानकर पुनः द्वैतवन में आकर युधिष्ठिर को बताता है। महाकाव्य का प्रथम सर्ग राजनीतिक विषय का भण्डार है। कवि द्वारा सुन्दर उक्तियों के माध्यम से रानीतिक विषयों का वर्णन बड़ी ही सुन्दर एवं मनोरम शैली में किया गया है।

The only composition of Mahakavi Bharavi is Kiratarajuniyam. Mahakavi Bharavi is counted among the best Sanskrit epics. Kiratarajuniyam is the only epic of the Mahakavi Bharavi composed in 18 cantos. In which Arjuna goes to the Himalayan mountain to do penance, to win the war against the Kirat prostitute Shiva and to obtain the Pashupat astra from the pleased Shiva, to conquer the Kauravas. At the beginning of the canto Vancher comes in front of Yudhishthira residing in the Dvaitavana. And knowing the state of Duryodhana and his sentiments, he comes back again and tells Yudhishthira. The first canto of the epic is a repository of political subject. The poet describes beautiful subjects through beautiful expressions in a very beautiful and captivating style.

मुख्य शब्द : कौतुकसूत्र, दूतसम्प्रेषण, तृणांकुर, अविचल, संवर्धित, झंझावत, परिचर्याभिलाषी, उल्लुण्ठन, अट्टहास, विलासवृत्ति।
Kautukasutra, Envoyment, Trinitarian, Avichal, Cultured, Fretful, Caregiver, Owl, Atthas, Luxury.

प्रस्तावना

महाकवि भारवि ने अपने काव्यशास्त्रीय वैशिष्ट्य में कलापक्ष और भावपक्ष दोनों के ही महत्व को स्वीकार किया है। उनका मत है कि काव्य में शब्द और अर्थ दोनों का ही महत्व है। जो बात कही जाये उनके पदों का अर्थ स्पष्ट होना चाहिए। भारवि के काव्य की विशेषता अर्थों में गौरव का होना है। स्वयं भारवि ने किरातार्जुनीयम् में स्थान–स्थान पर अपनी इस काव्यगत विशेषता का वर्णन किया है। चौदहवें सर्ग में अर्जुन द्वारा किरात की बात का उत्तर देते हुए वे वाणी की विशेषता का निम्न प्रकार से वर्णन करते है –

अर्थात् वाणी के वर्ण स्पष्ट रूप से उच्चारित होने चाहिए। वे सुनने में सुखकर होने चाहिए और शत्रुओं के भी हृदय को प्रसन्न करने वाले होने चाहिए। पदों में स्वच्छता और गाम्भीर्य होना चाहिये। वे अर्थों को प्रकाशित करने वाले होने चाहिए। कुछ व्यक्ति वाच्यर्थ की गम्भीरता को अधिक श्रेष्ठ बताते है, और कुछ शब्द सामर्थ्य की प्रशंसा करते हैं। परन्तु उत्तम वाणी इन दोनों विशेषताओं से युक्त होती है। उत्तम काव्य वही होता है। जो इन सब गुणों से सम्पन्न होकर मनोरम हो।[1] 'किरातार्जुनीयम्' में भारवि ने इन सभी विशेषताओं को बनाये रखा है।

यद्यपि महाकाव्य में अनेक छन्दों का प्रयोग किया गया है फिर भी कवि को वंशस्थ छन्द अधिक प्रिय है। वंशस्थ का प्रयोग भी अन्य छन्दों की अपेक्षा अधिक किया गया है। कवि के वंशस्थ छन्द के प्रयोग की प्रशंसा आचार्य क्षेमेन्द्र ने भी की है– यद्यपि वीर रस की प्रधानता के कारण ओजगुण का अधिक प्रयोग मिलता है। तथापि माधुर्य तथा प्रसाद का भी सफल चित्रण महाकाव्य में अनेक स्थलों पर दृष्टिगोचर होता है।

सामान्यतः भारवि वैदर्भी रीति के कवि हैं, किन्तु कालिदास की शैली के समान आकर्षण के कारण भारवि भावों के सौन्दर्य पर तो ध्यान रखते हैं किन्तु शब्दों की मधुरता का बलिदान इनके पाण्डित्य के निकषोपल पर हो जाता है।

धर्मशास्त्रीय वैशिष्ट्य

महाकवि भारवि के किरातार्जुनीयम् में ग्रन्थों में वर्णित धर्मशास्त्रीय विशेषता का महत्व बताया गया है। कवि का विश्वास है कि तप के माध्यम से असाधारण सिद्धियों को प्राप्त किया जा सकता है। तप की सिद्धि के लिए काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि प्रवृत्तियों पर संयम आवश्यक है। यह संयम योगशास्त्र द्वारा भी मान्य है। तपोनिष्ठ अर्जुन के आचरण में धर्मशास्त्रीय विशेषता का प्रतिबिम्ब देखा जा सकता है। अर्जुन के विषय में इन्द्र का कथन है– तुमने अच्छा किया जो नयी अवस्था में ही तप आरम्भ कर दिया। मेरे जैसे बूढ़ा भी प्रायः विषयों से आकृष्ट हो जाता है।[2]

पौराणिक वैशिष्ट्य

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य का कथानक पुराणाश्रित है। अनेक स्थलों पर अन्य पौराणिक सन्दर्भ भी प्राप्त होते हैं। यथा– देवताओं और असुरों द्वारा समुद्रमन्थन–

येनापविद्ध सलिलः स्फुटनागसह्मा
दैवासुरैर मृतमम्बुनिधिर्ममन्थे।
व्यावर्तनैरहिपतेरयमाहिताङ्क
व्यालिरवन्निव विभाति स मन्दरान्द्रिः।।[3]

देवता और असुरों ने जिस मन्दराचल से जल के ऊपर उछलने से जिसके बीच का नागलोक दिखाई दे रहा था। ऐसे समुद्र को अमृत के लिये मथा था।

ऐसे समुद्र को अमृत के लिए मथा था। वासुकी भाग के घर्षण से जिसके मध्य में चिह्न हो गया है यह वही मन्दराचल आकाश को विदीर्ण करता हुआ की तरह दिखाई दे रहा है।[4]

इस हिमालय पर पिनाकपाणि भगवान शंकर ने लोललोचना पार्वती का सात्विक भाव से कम्पित मङ्गल औषधियुक्त कौतुकसूत्र बद्ध पाणि को सर्परूप कौतुक सूत्र रहित हाथ से विलासपूर्वक ग्रहण किया था।

काव्यशास्त्रीय वैशिष्ट्य

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में कई स्थलों पर काव्यशास्त्रीय वर्णन प्राप्त होते हैं। आठवें, नौवें तथा दशवें सर्ग में कवि ने श्रृंगार का जो चित्रण किया है वह किसी एक कथानक का निरन्तरता प्रतीत न होकर युक्त श्रृंगार वर्णनों का समुदाय सा प्रतीत होता है।

अभिमुनि सहसा हृते परस्या घनमरूता जघनांशुकैकदेशे।
चकितमवसनोरू सत्रपायाः प्रतियुवतीरपि विस्मयं निनाय।।[5]
किरात0 (10/45)

तपस्वी अर्जुन के सम्मुख जाने पर वायु से जांघों के वस्त्रों के सहसा अपहृत हो जाने पर लज्जा करती हुई सुरांगना के जांघों के निरावरण हो जाने पर दूसरी युवति भी आश्चर्य से चकित हो गई।

अतः कहा जा सकता है कि भारवि की समदर्शिता संस्कृत के सभी शास्त्रों में समान थी। और उन्होंने अपने एकमात्र किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में समान रूप से स्पष्ट किया है। संस्कृत के महाकाव्य रस प्रधान हैं किन्तु वस्तु वर्णनों की भी उनमें बहुलता रहती है। संस्कृत कवियों की यह विशेषता रही है कि साधारण से साधारण वस्तु को अपनी कल्पना, सहृदयता, सूक्ष्मदर्शिता तथा वर्णन चातुरी से इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि पाठक या श्रोता के सम्मुख उस वस्तु का समग्र एवं चित्त आकर्षक रूप उपस्थित हो जाता है। भामह ने महाकाव्य में मन्त्रणा, दूतसम्प्रेषण, अभियान, युद्ध तथा नायक के अभ्युदय का वर्णन आवश्यक माना है।[6]

दण्डी के अनुसार कथावस्तु को अति संक्षिप्त नहीं होना चाहिए। उनके अनुसार नगर, पर्वत, समुद्र, ऋतु, चन्द्रोदय और सूर्योदय ये कथावस्तु को विशद बनाने में सहायक होते हैं। विवाह, उद्यान, क्रीड़ा, पान–गोष्ठी जैसी प्रासंगिक कथाओं का भी सन्निवेश होना चाहिए। शत्रु पर विजय प्राप्ति के लिए अमात्यों के साथ युद्ध, मन्त्रणा, दूत, सम्प्रेषण, रण–प्रयाण, युद्ध और अन्त में विजय के साथ कथावस्तु में व्याप्त नायक के अभ्युदय की कथा का वर्णन होना चाहिए।[7]

विश्वनाथ के अनुसार महाकाव्य में सूर्य, चन्द्रमा, दिन, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, प्रातःकाल, मध्याह्न, सन्ध्या, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, समुद्र, सम्भोग, विप्रलम्भ, मुनि, स्वर्ग, नगर, यज्ञ आदि का यथासम्भव सांगोपांग वर्णन करना चाहिए। कालिदास के परवर्ती कवियों में वैदुष्य प्रदर्शन की भावना इतनी प्रबल हो चुकी थी कि वे किसी भी वस्तु, स्थान, घटना का सीधा वर्णन न कर उसमें अपने पाण्डित्य का प्रदर्शन करने का पूर्ण लाभ उठाते थे। इस परम्परा का सूत्रपात करने वाले परवर्ती कवियों में महाकवि भारवि प्रथम स्थान रखते हैं।

भारवि ने किरातार्जुनीयम् में अपनी कल्पनाशक्ति सहृदयता और वर्णन चातुरी से ऋषि वर्णन, ऋतु वर्णन, पर्वतों, वन, विहार, जल–क्रीड़ा, सन्ध्या वर्णन, पानगोष्ठी, दूतसम्प्रेषण आदि विभिन्न वस्तुओं का वर्णन रुचि पूर्ण किया है।

किरातार्जुनीयम् में महर्षि व्यास ऋषि का वर्णन

किरातार्जुनीयम् में महर्षि व्यास का संक्षिप्त किन्तु सुन्दर रूप में वर्णन प्राप्त होता है। किरातार्जुनियम में तपस्याओं के जन्मदाता, सभी आपत्तियों को दूर करने वाले पराशर ऋषि के पुत्र मुनि वेद व्यास जब वहाँ अचानक उपस्थित हुए तब महाराज युधिष्ठिर के द्वारा मूर्तिमान पुण्य राशि के समान बड़े आश्चर्य से देखा। राजा मुनि को देखकर आश्चर्य में पड़ गये। यद्यपि मुनि मानव शरीर से उपस्थित हुए थे पर राजा को ऐसा प्रतीय हुआ मानो साक्षात्कार मुर्तिमान पुण्य ही उपस्थित हो गया हो। महर्षि व्यास मानो साक्षात् पुण्यराशि की मूर्ति थे ऐसे मूर्तिमान पुण्यात्मा तपस्वियों का दर्शन भाग्य से मिलता है।[8] महर्षि व्यास की दर्शन सम्पत्ति की महिमा का वर्णन करते हुए युधिष्ठिर कहते हैं कि आपका यह दर्शन बिना पुण्य किये पुरुषों के लिए दुष्प्राय है। यह रजोगुण से रहित और अभिलाषाओं को सफल बनाने में समर्थ हैं। यह मेघनिर्मुक्त आकाश की वर्षा के सदृश हैं। आपका संदर्शन श्री की वृद्धि करता है, पापों को निर्मूल करता है, कल्याण की वर्षा करता है, और कीर्ति का विस्तार करता है।[9]

किरातार्जुनीयम् में हिमालय पर्वत का वर्णन

किरातार्जुनीयम् में हिमालय पर्वत का महाकवि भारवि ने अप्रतिम वर्णन किया है। हिमालय अत्यन्त उन्नत होने के कारण ऐसा मालूम पड़ता था मानों अपनी ऊँचाई से सुमेरू पर्वत को जीतने के लिए या दिशाओं के अन्त को देखने की तीव्र उत्कण्ठा से या आकाश को लांघने के लिए ऊपर की ओर उठ खड़ा हुआ हो। ऊँचाई के कारण एक तरफ तो सूर्यमण्डल से प्रकाशित था और दूसरी तरफ घने रात्रि के अन्धकार से व्याप्त था, अतः आगे के भाग में अट्टहास से श्वेत पीछे गज चर्म से आवृत भगवान शिव की प्रतीत हो रहा था।[10]

यह हिमालय अपने उन्नत शिखरों पर बहती हुई गंगा को धारण करता है, जो गंगा बड़ी–बड़ी चट्टानों से रूककर नीचे की तरफ गिरने वाले जलों से ऊपर को उछलते हुए फुहारे की तरह जलकणों से श्वेत चामर धारण की हुई की तरह प्रतीत होती है। नीति वाले और भाग्य वालो से सदा सुलभी निधि और पक्षों के स्वामी कुबेर की धनराशियों से पूर्ण इस हिमालय से परिपूर्ण इस लोक की भूमि अन्य लोकों को जीतकर सुशोभित हो रही है। अर्थात् अनन्त धनराशि वाले इस हिमालय से पृथ्वी अन्य लोको से श्रेष्ठ है।[11] तीनों लोक (आकाश, पाताल और भूलोक) पार्वती के पिता इस हिमालय की तुलना नहीं कर सकते, क्योंकि साधारण लोगों से अज्ञात महिमा वाले भगवान शंकर इस पर सदा निवास करते हैं।

हिमालय में स्थित कैलाश पर्वत का कवि ने बहुत ही रमणीय वर्णन किया है। कैलाश पर्वत पर प्राप्त मरकत मणि की कवि ने भाव–पूर्ण कल्पना की है। इसके आस–पास की भूमि पर शुक के बच्चों के सदृश मनोरम मरकत मणि की किरणें अभिनव तृणांकुर की–सी दिखायी देती है। उन्हें हरिणियाँ घास समझकर खाने के लिए मुख में लेती हैं और फिर छोड़ देती हैं। वे किरणें सूर्य की किरणों से संवलित होकर अधिक प्रकाश धारण कर लेती है।[12]

अप्सराओं एवं गन्धर्वों का वर्णन

किरातार्जुनीयम् में अर्जुन तथा गन्धर्वों के साथ अप्सराओं के इन्द्रकील प्रस्थान करने का वर्णन प्राप्त होता है। अर्जुन के तप को भंग करने के लिये जब अप्सरायें स्वर्ग से इन्द्रकील पर्वत के लिए प्रस्थान कर रही थी, तो उन अप्सराओं की शोभा का कवि ने अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया है।

वे अप्सरायें स्तनों के भार से झुकी हुयी थी। स्वामी की सम्भावना से पूर्ण तृप्त थी, उनके सौन्दर्य को अविचल कमल की शोभा का अपहरण करने वाले देवेन्द्र के सहस्त्र नेत्र भी टकटकी बाँध कर देखने में समर्थ न हो सकें।[13] इन्द्रकील के शिखरों पर शब्द करते हुए झरने बह रहे थे। उनकी गम्भीर प्रतिध्वनियों से संवर्धित रथों की गड़गड़ाहट को मयूरों ने मेघ गर्जन के भ्रम में पड़कर अपनी ओर गर्दन उपर उठाकर बड़ी उत्कण्ठा से सुना। अप्सराओं के इन्द्रकील प्रस्थान के प्रसंग में हाँथियों का भी विस्तार से वर्णन किया गया है। हाँथियों की तुलना पर्वतों से की गयी है। गजशास्त्रवेत्ता महावतों ने हाथियों की थकावट दूर करने के लिए उन पर से ध्वजा, झूल, कवच आदि को उतारकर पृथ्वी पर रख दिया। उस समय वे उन पर्वतों की तरह इधर–उधर पड़े रहे, जिनके घने वृक्षों के वन प्रलयकालीन झंझावत से उखाड़कर फेक दिये जाते हैं और पर्वत भी उठाकर जहाँ कहीं भी फेंक दिये जाते हैं।[14]

किरातार्जुनीयम् में अप्सराओं एवं गन्धर्वों की उद्यान क्रीड़ा का विस्तार से वर्णन किया गया है। वन–विहार में अनुरक्त अप्सराओं की मनः स्थितियों का कवि ने सुन्दर चित्रण किया है। इन्द्रकील पर्वत के कई स्थानों पर वृक्षों में सुन्दर–सुन्दर पुष्प खिले हुए थे। देवाङ्गनाएँ वृक्षों के सुन्दर पुष्पों पर मोहित हो गयी थीं। उनके हाँथों के लिए वे पुष्प सुलभ थे, किन्तु वे तो उन पुष्पों का स्वयं चयन न कर परिचर्याभिलाषी प्रिय सहचरों के द्वारा चुने हुए पुष्पों को ही ग्रहण करती थी।[15] वन–विहार के प्रसंग में मानिनी नायिका का अत्यन्त सरस एवं भावपूर्ण चित्रण प्राप्त होता है। एक सुरसुन्दरी फूलों को देते हुए प्रियतम द्वारा जोरों से सपत्नी का नाम लेकर पुकारी गयीं। लेकिन वह मानिनी कुछ नहीं बोली, केवल आँखों में आँसू भरकर चरण से भूमि को खोदने लगी। सपत्नी से प्रेम है, मुझे तो दिखावा के लिये पुष्प दे रहा है। यह सोचकर वह नायिका खिन्न हो गयी। इन्द्रकील पर्वत के शिखरों के वन पथ पर विचरण करती हुई देवाङ्गनाओं की गति थक जाने से मन्द पड़ गयी थी। उनके श्रान्त–क्लान्त अंगों को देखकर गन्धर्वगण इतने मुग्ध हो गये, जैसे उन्होंने उन्हें प्रथम बार ही देखा हो। अतः उन अंगों को देखने की उत्कट अभिलाषा ने गन्धर्वों पर अपना अधिकार जमा लिया।

जल–क्रीड़ा वर्णन

किरातार्जुनीयम् के आठवें, नौवें और दसवें सर्गों देवाङ्गनाओं के वन–विहार, जल क्रीडा, रतिकेलि और अर्जुन को लुभाने के प्रयत्नों का वर्णन करने में कवि ने श्रृंगार रस की उत्तम अभिव्यंजना की है। परन्तु भारवि के ये श्रृंगार कालिदास और अश्वघोष के श्रृंगार के समान उदात्त और मर्यादित नहीं है। भारवि का श्रृंगार–वर्णन विलासवृत्ति और कामुकता को उभारने वाला है।

रमणियों ने जिस अञ्जन को लगाया था, वह प्रान्त की रक्तता रोकने के लिए ही था, इसमें संदेह नहीं। क्योंकि उस अंजन के पानी से धुल जाने पर भी उसी राग ने आँखो की शुक्लता को दूर कर दिया–किन्तु नयनों की शोभा को नहीं दूर किया। युवतियों की पत्ररेखाएँ धुल गयीं, ओठों पर लगाये गये महावर भी धुल गये, आँखें भी अञ्जन रहित हो गईं।[16] तब भी उनकी (देवाङ्गनाओं की) सुन्दरता पूर्ववत् बनी रही। यह देखकर गन्धर्वों ने अच्छी तरह समझ लिया कि भूषण इनके शरीर को ही भूषित नहीं करते किन्तु इनके शरीर से वे भी भूषित होते हैं। भय कम्पित अप्सराओं को देखकर उनकी सखियों तथा गन्धर्वो के आनन्दित होने की कवि ने अत्यन्त सुन्दर चित्र–प्रस्तुत किया है जलविहार करती हुई सुरांगनाओं की जंघाओं का जब जल के भीतर तैरती हुयी मछलियों से स्पर्श हो जाता है तो वे डर कर और चकपका कर देखने लगती थी, और अपने कर किसलयों को झकझोरने लग जाती थी। यह दृश्य उनकी सखियों के लिए भी मनोरम हो जाता था। उनके प्रेमियों के विषयों के लिए भी मनोरम हो जाता था। उनके प्रेमियों के विषय में तो कहना ही

क्या ? स्त्रियाँ प्रेम से की गई बनावटी चेष्टाओं से भी मन को हर लेती हैं।

सायंकाल वर्णन

महाकवि भारवि ने किरातार्जुनीयम् के चतुर्थ सर्ग में गौओं के सायंकाल के समय घर लौटने का अत्यन्त ही मनोरम वर्णन किया है।

उपारताः पश्चिमरात्रिगोचरादपरायन्तः पतितुः जवेन गाम्।
तमुत्सुकाश्चकुरवेक्षणोत्सुकं गवां गणाः प्रस्नुतपीवरोधसः।।[17]

किरात0 (4/10)

रात्रि के उत्तरार्ध काल का गायों के भोजन स्थान से घर के ओर लौटे हुए, वेग से धरातल पर दौड़ने में असमर्थ बछड़ों के प्रेम से दूध टपकाते मोटे स्तन वाले उत्सुक गायों के समूह अर्जुन को देखने के लिये उत्सुक बना दिया।

षड् ऋतुओं का वर्णन

किरातार्जुनीयम् के दशम् सर्ग में षड् ऋतुओं का वर्णन कवि ने बड़ा ही मनोहर वर्णन किया है। देवाङ्गनायें अपने कार्य को पूरा करने के लिए निकलीं। उन्होंने उन्मद वातावरण को उत्पन्न किया। अर्जुन के व्रत को विचलित करने के लिये उन्होंने छः ऋतुओं की सहायता ली। और उस (अर्जुन) तपस्वी पर अपनी सारी मोहक शक्ति लगा दी। गन्धर्वों ने वीणा बजाई, अप्सराओं ने नृत्य किया। परन्तु तपस्वी अर्जुन को वे विचलित नहीं कर सकीं। कहीं–कहीं सरोवरों के जल जिनमें विकसित कमल सुशोभित हो रहे थे, फेन और कमल पराग से आच्छादित थे, जिन्हें देखकर अर्जुन को पृथ्वी पर खिले हुए कमल का भ्रम हो रहा था, किन्तु ऊपर की ओर उल्लुण्ठन करते हुए पुष्प पराग और फेन राशि के हट जाने से जल दिखलाई पड़ने लगता था, जिससे अर्जुन का भ्रम दूर हो गया।[18]

दशम सर्ग में षड् ऋतुओं के वर्णन को महाकवि भारवि ने अत्यधिक सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है। अप्सराओं के इन्द्रकील पर्वत पर आने का प्रमुख उद्देश्य अर्जुन को आकर्षित करना तथा उनके तप में विघ्न उत्पन्न करना है। यहाँ कवि ने शरद् ऋतु को वधू और वर्षाकाल को वर के रुप में वर्णित किया है।[19]

मृणाल तन्तु रूप कङ्कण को तथा कुमुदनी के वनरूप वस्त्र को धारण करती हुई शरद् रूपी वधू के कोमल करकमलों का ग्रहण वर्षा रूप वर ने किया। वसन्त ऋतु में भ्रमर ने काँपती हुई शाललता के पुष्प रूपी मुख का जिसमें मकरन्द मद्य की गन्ध व्यक्त हो रही थी, चुम्बन किया। पवन रूप निःश्वास ने अधरानुकारी पल्लव हिल रहे थे। वह पुष्प मानों मानिनी के मुख का अनुकरण कर रहा था।[20]

अध्ययन का उद्देश्य

संस्कृत कवियों में भारवि का महत्वपूर्ण स्थान है। वे एक तरफ कलावादी कविता के नये युग के रूप में उपस्थित होते है, दूसरी ओर वे कालिदास की रचनाओं से भी प्रभावित है। भारवि को अपने समय के प्रमुख राजाओं का आश्रय प्राप्त था। अतः व्यावहारिक राजनीति के प्रौढ़ ज्ञान का प्रदर्शन भी उन्होंने अपने काव्य में किया है। प्रथम सर्ग में वनेचर के मुख से दुर्योधन का वर्णन एक राजा के रूप में कराकर उन्होंने राजनीतिक सिद्धान्तों की अभिव्यक्ति करायी है। भारवि के काव्य की विशेषता अर्थों में गौरव का होना है। स्वयं भारवि ने 'किरातार्जुनीयम्' में स्थान–स्थान पर अपनी काव्यगत विशेषता का समर्थन किया है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवरणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि महाकवि भारवि ने न केवल कथावस्तु को रोचक बनाया अपितु अपने पाण्डित्य और विद्वता का अद्भुत परिचय दिया। प्रकृति के दृश्यों का मनोहर वर्णन भारवि की भव्य कला के प्रौढ़ अङ्ग हैं। संसार की विपुल अनुभूति की पृष्ठभूमि पर किरातार्जुनीयम् में व्यावहारिक तत्वज्ञान का वर्णन कवि के अनुभव की विशालता, राजनीति की पटुता तथा कथनोपकथन की चातुरी प्रदर्शित करने का पर्याप्त साधन है। भारवि से हम बहुत ही बड़ी बातों की आशा नही कर सकते परन्तु जितना उन्होंने लिखा है प्रौढ़ता, अनुभूति तथा भावुकता के साथ लिखा है और यह भारवि की निजी विशेषता है। संस्कृत काव्य की एक नवीन शैली–विचित्र मार्ग की सृष्टि करने के लिये भी भारवि प्रबन्ध काव्यों के विकास में एक गौरवपूर्ण स्थान धारण करते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *भवन्ति ते सभ्यतमा विपश्चितां मनोगतं वाचि निवेशयन्ति ये।*
   नयन्ति तेष्वप्युपपन्ननैपुणा गभीरमर्थं कतिचित्प्रकाशताम्।। किरात0 (14/4)
2. *श्री बदरीनारायण मिश्र, किरात०, पृ०सं० 298*
3. *श्री बदरीनारायण मिश्र, किरात० (5/30), पृ०सं० 136*
4. *अस्मिन्नगृह्यत पिनाकभृता सलीलमाबद्धवेपधुरधीरविलोचनायाः।*
   विन्यस्तमङ्गलमहौषधिरीश्वरायाः स्त्रास्तोरगप्रतिसरेण करेण पाणिः।।
   किरात० 5/33
5. *श्री बदरीनारायण मिश्र, किरात०, पृ०सं० 284*
6. *मन्त्रप्रयाणजिनायकाभ्युदयैश्च यत्।*
   पत्रचभिः सन्धिभिर्युक्तं नातिव्याख्येयमृद्धियत्।।
   काव्यालंकार– 1/20
7. *नगरार्णवशैलर्तु चन्द्रार्कोदयवर्णनैः*
   उद्यानसलिलक्रीडामधुपानरतोत्सवैः।
   विप्रलम्भैर्विवाहैश्च कुमारोदयवर्णनैः
   मन्त्रदूतप्रयाणजिनायकाभ्युदयैदपि।।
   काव्यादर्श (1/16.17)
8. *सहसोपगतः सविस्मयं सूतिरसूतिरापदाम्।*
   ददृशे जगतीभुजा मुनिः सः वपुष्मानिव पुण्यसंचयः।।
   किरात0 (2/56)
9. *अनाप्त पुण्योपचयैर्दुरापा फलस्य निर्धूतरजाः सवित्री।*
   तुल्या भवद्दर्शनसम्पदेषा वृष्टेर्दिवो वीतबलाहकायाः।।
   किरात० (3/5)
10. *तपनमण्डलदीपितमेकतः सततनैशतमोवृतमन्यतः।*
    हसितभिन्नमिस्त्रचयं पुरः शिवमिवानुगतं गजचर्मणा ।।
    किरात0 (5/2)
11. *सुलभैः सदा नयवताऽयवता निधिगुह्यकाधिपरमैः परमैः।*

अमुना धनैः क्षितिभृतातिभृता समतीत्य भाति जगती जगती।। किरात0 (5/20)

12. परिसरविषयेषु लीढमुक्ता हरिततृणोद्गमशङ्कया मृगीभिः।
इह नवशुककोमला मणीनां रविकरसंवलिताः फलन्ति भासः।। किरात० (5/38)
13. प्रणतिमथविधाय प्रस्थिताः सद्यानस्ताः स्तनभरनमिताङ्गनाः प्रीतिभाजः। अचलनलिनलक्ष्मीहारि नालं बभूत स्तिमितममरभर्तुर्द्रष्टुमक्ष्णां सहस्त्रम्। किरात० (6/47)
14. उत्सृष्टध्वजकु थकङ्कटा धरित्रीमानीता विदितनयैः श्रमं विनेतुम्। आक्षिप्तद्रुमगहना युगान्तवातैः पर्यस्ता गिरय इव द्विपा विरेजुः।। किरात0 (7/30)
15. स्वगोचरे सत्यपि चित्तहारिणा विलोभ्यमानाः प्रसवेन शाखिनाम्। नभश्चराणामुपकर्तुमिच्छतां प्रियाणि चक्रुः प्रणयेन योषितः।। किरात0 (8/13)
16. असंशयं न्यस्तमुपारक्ततां यदेव रोद्धुं रमणीभिरंजनम्। हृतेऽपि तस्मिन्सलिलेन शुक्लतां निरास रागो नयनेषु न श्रियम्।। किरात0 (8/38)
17. किरात0 (4/10)
18. श्री बदरी नारायण मिश्र, किरात०, (पृष्ठ संख्या 102)
19. धृत बिसवलयावलिर्वहन्ती कुमुदवनैकदुकूलमात्तबाणा। शरदमलतले सरोजपाणौ धनसमयेन वधूरिवाललम्बे।। किरात० (10/24)
20. श्वसनचलितपल्लवाधरोष्ठे नवनिहितेर्ष्यमिवावधूनयन्ती। मधुसुरभिणि षट्पदेन पुष्पे मुख इव शाललतावधूश्चुचुम्बे। किरात० (10/34)